गद्य 2 मित्रता

- रामचंद्र शुक्ल

हिंदी समालोचना, निबंध तथा हिंदी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्पराओं को सुदृढ़ करने की दृष्टि से आचार्य रामचंद्र शुक्ल का नाम सबसे अग्रणी है। शुक्ल जी का जन्म सन्1888 में तथा देहावसान सन् 1940 में हुआ। शुक्ल जी ने संस्कृत तथा अंग्रेज़ी साहित्य, मनोविज्ञान, इतिहास आदि का गहन अध्ययन किया। आपने "हिंदी साहित्य का इतिहास" लिखकर साहित्य के इतिहास-लेखन की वैज्ञानिक नींव डाली। "श्रद्धा और भक्ति", "उत्साह", "करुणा" जैसे मनोविकारों पर गम्भीर निबंध लिखकर हिंदी निबंध को नई दिशा प्रदान की। जायसी, तुलसी, सूर आदि के काव्यों की गहरी मीमांसा कर तथा रस जैसे शास्त्रीय विषयों पर सैद्धान्तिक और व्यावहारिक समीक्षा लिखकर हिंदी आलोचना को गंभीर स्वरूप प्रदान किया। उनके मनोविकार संबंधी निबंध 'चिन्तामणि" भाग 1-2 में संकलित हैं। आपने वर्षों तक "नागरी प्रचारिणी पत्रिका" का संपादन किया। गद्यकार के साथ-साथ आप कहानीकार भी थे।

"मित्रता" शुक्ल जी का मनोविकार संबंधी एक सरल, विचार-प्रधान तथा प्रेरणा देनेवाला निबंध है। इस निबंध में उन्होंने सरल भाषा में मित्रता की आवश्यकता, अच्छे मित्र के गुण, सत्संगति का लाभ आदि पर व्यावहारिक विचार प्रस्तुत किए हैं।

जब कोई युवा पुरुष अपने घर से बाहर निकलकर बाहरी संसार में अपनी स्थिति जमाता है, तब पहली कठिनता उसे मित्र चुनने में पड़ती है। यदि उसकी स्थिति बिलकुल एकांत और निराली नहीं रहती तो उसकी जान-पहचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिनों में कुछ लोगों से उसका हेल-मेल हो जाता है। मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर उसके जीवन की सफलता निर्भर हो जाती है; क्योंकि संगत का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण पर बड़ा भारी पड़ता है। हम लोग ऐसे समय में समाज में प्रवेश करके अपना कार्य आरंभ करते हैं जब कि हमारा चित्त कोमल और हर तरह का संस्कार ग्रहण करने योग्य रहता है, हमारे भाव अपरिमार्जित और हमारी प्रवृत्ति अपरिपक्व रहती है, हम

लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं जिसे जो जिस रूप में चाहे उस रूप का करें - चाहे वह राक्षस बनावे चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है जो हमसे अधिक दृढ़-संकल्प के हैं; क्योंकि हमें उनकी हर एक बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और बुरा है जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई दाब रहती है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। दोनों अवस्थाओं में जिस बात का भय रहता है, उसका पता युवा पुरुषों को प्रायः विवेक से कम रहता है। यदि विवेक से काम लिया जाय तो यह भय नहीं रहता; पर युवा पुरुष प्रायः विवेक से कम काम लेते हैं। कैसे आश्चर्य की बात है कि लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके गुण-दोषो को कितना परख लेते हैं पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते। वे उसमें सब बातें अच्छी-ही-अच्छी मानकर उस पर अपना पूरा विश्वास जमा देते हैं। हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई व साहस-ये ही दो-चार बातें किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना बना लेते हैं। हम लोग यह नहीं सोचते कि मैत्री का उद्देश्य क्या है तथा जीवन के व्यवहार में उसका कुछ मूल्य भी है। यह बात हमें नहीं सूझती कि यह एक ऐसा साधन है जिससे आत्मशिक्षा का कार्य बहुत सुगम हो जाता है। एक प्राचीन विद्वान का वचन है - (विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है, जिसे ऐसा मित्र मिल जाए तो उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया। विश्वासपात्र मित्र जीवन एक औषध है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों में हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचावेंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साह होंगे तब हमें उत्साहित करेंगे; सारांश यह है कि वे हमें उत्तमतापूर्वक जीवन-निर्वाह करने में हर तरह से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम-से-उत्तम वैद्य की-सी निपुणता और परख होती है, अच्छी-से-अच्छी माता का-सा धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक युवा पुरुष को करना चाहिए।

छात्रवास में तो मित्रता की धुन सवार रहती है। मित्रता हृदय से उमड पड़ती है। पीछे के जो स्नेह-बंधन होते हैं, उसमें न तो उतनी उमंग रहती है और न उतनी खिन्नता। बालमैत्री में तो मनन करनेवाला आनंद होता है जो हृदय को बेधनेवाली ईर्ष्या होती है, वह और कहाँ कैसी मधरता कैसी अनुरक्त होती हैा कैसा अपार विश्वास होता है। हृदय के कैसे-कैसे उद्‌गार निकलते हैं। वर्तमान कैसे आनन्दमय दिखाई पड़ता है और भविष्य के संबंध में कैसी लुभानेवाली कितनी जल्दी बातें लगती है और कितनी जल्दी मानना-मनाना होता है। 'सहपाठी की मित्रता' इस उक्ति में हृदय के कितने भारी उथल-पुथल का भाव

भरा हुआ है। किंतु जिस प्रकार युवा पुरुष की मित्रता स्कूल के बालक की मित्रता से दृढ़, शांत और गंभीर होती है, उसी प्रकार हमारी युवावस्था के मित्र बाल्यावस्था के मित्रों से कई बातों में भिन्न होते हैं। मैं समझता हूँ कि मित्र चाहते हुए बहुत से लोग मित्र के आदर्श की कल्पना मन में करते होंगे, पर इस कल्पित आदर्श से तो हमारा काम जीवन की झंझटों में चलता नहीं। सुंदर प्रतिभा, मनभावनी चाल और स्वच्छन्द प्रकृति से ही दो-चार बातें देखकर मित्रता की जाती है, पर जीवन-संग्राम में साथ देनेवाले मित्रों में इससे कुछ अधिक बातें चाहिए। मित्र केवल उसे नहीं कहते जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें पर जिससे हम स्नेह न कर सके, जिससे अपने छोटे-मोटे काम तो हम निकालते जाएँ, पर भीतर ही भीतर घृणा करते रहें। मित्र सच्चे पथ-प्रदर्शक के समान होना चाहिए जिस पर हम पूरा विश्वास कर सकें; भाई के समान होना चाहिए जिसे हम अपनी प्रीतिपात्र बना सके। हमारे और हमारे मित्र के सच्ची सहानुभूति होनी चाहिए। ऐसी सहानुभूति जिससे एक के हानि-लाभ को दूसरा अपना हानिलाभ समझे। मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार काम करते हों व एक ही रुचि के हों। इसी प्रकार प्रकृति और आचरण की समानता भी आवश्यक व वांछनीय नहीं है। दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है। राम धीर और शांत प्रकृति के थे, लक्ष्मण उग्र और उद्धत स्वभाव के थे, पर दोनों भाइयों में अत्यंत प्रगाढ़ स्नेह था। उदार तथा उच्चाशय कर्ण और लोभी दुर्योधन के स्वभावों में कुछ विशेष समानता न थी, पर उन दोनों की मित्रता खूब निभी। यह कोई भी बात नहीं है कि एक ही स्वभाव और रुचि के लोगों में ही मित्रता हो सकती है। समाज में विभिन्नता देखकर लोग एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। जो गुण हम में नहीं हैं, हम चाहते हैं कि कोई ऐसा मित्र मिले जिसमें वह गुण हो। चिंताशील मनुष्य प्रफुल्लचित्त मनुष्य का साथ ढूँढता है, निर्बल बली का, धीर उत्साही का। उच्च आकांक्षा वाला चंद्रगुप्त युक्ति और उपाय के लिए चाणक्य का मुँह ताकता था। नीति-विशारद अकबर मन बहलाने के लिए बीरबल की ओर देखता था।

मित्र का कर्तव्य इस प्रकार बतलाया गया है - "उच्च और महान कार्यों में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी निज की सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ"। यह कर्तव्य उसी से पूरा होगा जो दृढ़-चित्त और सत्य-संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए कि जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिसमें हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सके और यह विश्वास

कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा। मित्रता एक नई शक्ति की योजना है। बर्क ने कहा है कि आचरण-दृष्टांत ही मनुष्य जाति की पाठशाला हैं; जो कुछ वह उनसे सीख सकता है, वह और किसी से नहीं।

संसार में अनेक महान पुरुष मित्रों की बदौलंत बड़े-बड़े कार्य करने में समर्थ हुए हैं। मित्रों ने उनके हृदय के उच्च भावों को साहस दिया है। मित्रों ही के दृष्टांतों को देखकर उन्होंने अपने हृदय को दृढ़ किया है। अहा! मित्रों ने कितने मनुष्यों के जीवन को साधु और श्रेष्ठ बनाया है। उन्हें मूर्खता और कुमार्ग के गड्हों से निकालकर सात्विकता के पवित्र शिखर पर पहुँचाया है। मित्र उन्हें सुंदर मंत्रणा और सहारा देने के लिए सदा उद्यत रहते हैं उनके सुख और सौभाग्य की चिंता वे निरंतर करते रहते हैं। ऐसे भी मित्र होते हैं जो विवेक को ज़ागृत करना और कर्तव्य-बुद्धि को उत्तेजित करना जानते हैं। ऐसे भी मित्र होने हैं जो टूटे जी का जोड़ना और लड़खड़ाते पाँवों को ठहराना जानते हैं। बहुतेरे मित्र हैं जो ऐसे दृढ़ आशय और उद्देश्य की स्थापना करते हैं जिससे कर्मक्षेत्र में आप भी श्रेष्ठ बनते हैं और दूसरों को भी श्रेष्ठ बनाते हैं। मित्रता जीवन और मरण के मार्ग में सहारे के लिए है। यह सैर-सपाटे और अच्छे दिनों के लिए भी है तथा संकट और विपत्ति के बुरे दिनों के लिए भी है। यह हँसी-दिल्लगी के गुलछर्रों में भी साथ देती है और धर्म के मार्ग में भी। मित्रों को एक-दूसरे के जीवन के कर्तव्यों को उन्नत करके उन्हें साहस, बुद्धि और एकता द्वारा चमकाना चाहिए। हमें अपने मित्र से कहना चाहिए - "मित्र! अपना हाथ बढ़ाओं। यह जीवन और मरण में हमारा सहारा होगा। तुम्हारे द्वारा मेरी भलाई होगी। पर यह नहीं कि सारा ऋण मेरे ही ऊपर रहे, तुम्हारा भी उपकार होगा, जो कुछ तुम करोगे उससे तुम्हारा भी भला होगा। सत्यशील, न्यायी और पराक्रमी बने रहो, क्योंकि यदि तुम चूकोगे तो मैं भी चूकूँगा। जहाँ-जहाँ तुम जाओं, मैं भी आऊँगा। तुम्हारी बढ़ौती होगी तो मेरी भी बढ़ौती होगी। जीवन के संग्राम में वीरता के साथ लड़ों क्योंकि तुम्हारी ढाल मैं लिए हूँ।"

जो बात ऊपर मित्रों के संबंध में कही गई है, वही जान-पहचानवालों के संबंध में भी ठीक है। जो मनुष्य संस्कार में लगा हो, उसे अपने मिलने-जुलनेवालों के आचरण पर भी दृष्टि रखनी चाहिए, उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि उनकी बुद्धि और उनका आचरण ठिकाने का है। साधारणतः हमें अपने ऊपर ऐसे प्रभावों को न पड़ने देना चाहिए जिनसे हमारी विवेचना की गति मंद हो व भले-बुरे का विवेक क्षीण हो। जीवन का उद्देश्य क्या है? क्या वह भविष्य के लिए आयोजन का स्थान नहीं। क्या वह तुम्हारे हाथ सौंपा हुआ ऐसा पदार्थ नहीं है जिसका लेख तुम्हें परमात्मा को और अपनी आत्मा को देना होगा? सोचो तो कि दो, चार, दस गुना करके लौटाना चाहिए, अथवा ज्यों के त्यों बिना व्याज

व वृद्धि के। यदि जीवन एक प्रहसन ही है जिसमें तुम गा-बजाकर और हँसी-मजाक करके समय काटो, तब जो कुछ उसके महत्व के विषय में मैने कहा है, सब व्यर्थ ही है। पर जीवन में गंभीर बातें और विपत्ति के दृश्य भी हैं। मेरी समझ में तो महाराणा प्रताप की भाँति संकट में दिन काटना बाजिदअली शाह की भाँति भोग-विलास करने से अच्छा है। मेरी समझ में शिवाजी के सवारों की तरह चने बाँधकर चलना औरंगजेब के सवारों की तरह हुक्के और पानदान के साथ चलने से अच्छा है। मैं जीवन को न तो दुःखमय और न सुखमय बतलाना चाहता हूँ बल्कि उसे एक ऐसा अवसर समझता हूँ, जो हमें कुछ कर्तव्यों के पालन के लिए दिया गया है, जो परलोक के लिए कुछ कमाई करने के लिए दिया गया है। हमारे सामने ऐसे बहुत से लोगों के दृष्टांत हैं जिनके विचार भी महान् थे, कर्म भी महान् थे। जैसा कि महात्मा डिमास्थिनीज ने एथेंस वासियों से कहा था, उसी प्रकार हमें भी अपने मन में समझना चाहिए कि "यदि हमें अपने महान् पूर्व-पुरुषों की भांति कर्म करने का अवसर न मिले, तो हमें कम-से-कम अपने विचार उनकी भाँति रखने चाहिए और उनकी आत्मा के महत्व का अनुकरण करना चाहिए।" अतः हमें सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम कैसा साथ करते हैं। दुनिया में जैसी हमारी संगति होगी, वैसा हमें समझेगी ही; पर हमें अपने कामों में भी संगत ही के अनुसार सहायता व बाधा पहुँचेगी। उसका चित्त अत्यंत दृढ़ समझना चाहिए

जिसकी चित्तवृत्ति पर उन लोगों का कुछ भी प्रभाव न पड़े जिनका बराबर साथ रहता है। पर अच्छी तरह समझ रखो कि यह कभी हो नहीं सकता। चाहे तुम्हें जान न पड़े, पर उनका प्रभाव तुम पर बराबर हर घड़ी पड़ता रहेगा और उसी के अनुसार तुम उन्नत व अवनत होगे, उत्साहित व हतोत्साह होगे। एक विद्वान से पूछा गया - "जीवन में किस शिक्षा की सबसे अधिक आवश्यकता हैं?" उसने उत्तर दिया - 'व्यर्थ की बातों को जानकर भी अनजान होना।" यदि हम जान - पहचान करने में बुद्धिमत्ता से काम न लेंगे तो हमें बराबर अनजान बनना पड़ेगा।

कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैर में बँधी चक्की के समान होगी जो उसे दिन-दिन अवनति के गढ़े में गिराती जाएगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देनेवाली बौंहु के समान होगी जो उसे निरंतर उन्नति की ओर उठाती जाएगी।

अभ्यास

I कठिन शब्दार्थ :-

अनुसंधान - खोज; विश्वास पात्र - भरोसा रखने योग्य; पथ प्रदर्शक - मार्ग दर्शन; निष्कलंक - स्वच्छ / पवित्र; सात्विकता - सादगी; आचरण - व्यवहार

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिएः-

1. लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके गुण दोष को कितना परख लेते हैं पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते।

2. मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार का कार्य करते हो वह एक ही रुचि के हो।

3. हृदय को उज्जवल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगत की छूत से बचो।

4. हमारे सामने ऐसे बहुत से लोगों के दृष्टांत है जिनके विचार भी महान थे, कर्म भी महान थे।

5. हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई व साहस ये ही दो चार बातें किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना मित्र बना लेते हैं।

6. बुरी बाते हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती है।

III वाक्यों में प्रयोग कीजिएः-

सहानुभूति होना, धुन सवार होना, ज्यों का त्यों, दृढ़ संकल्प, अनुकरण करना, साहस दिखाना, हतोत्साहित होना, जीवन - संग्राम, उच्च आकांक्षा

IV एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिएः

1. मित्रता निबंध से क्या सीख मिली?

2. अच्छे मित्र का लक्षण बताइए?

3. कौन-सा ज्वर सबसे भयानक होता है?

4. युवा पुरुष को मित्र चुनने की कठिनता कब होती है?

5. शुकलजी के अनुसार जीवन की औषधि क्या है?

6. सच्चा मित्र कौन हैं?

V प्रश्नों का उत्तर तीन वाक्यों में दीजिएः-

1. किन गुणों को देखकर लोग चटपट उसे अपना मित्र बना लेते हैं?

2. राम लक्ष्मण के स्वभाव, कर्ण और दुर्योधन के स्वभाव में अंतर होने पर भी उनके बीच में मित्रता कैसे खूब निभी?

3. चंद्रगुप्त चाण्क्य का मुँह और अक्बर बीरबल की ओर क्यों देखता था?

4. मित्र के कर्तव्य और लक्षणों पर शुक्लजी का विचार क्या था?

5. शुक्लजी महान पुरुषों का जिक्र करके क्या बातें कहते हैं?

6. मनुष्य का जीवन थोड़ा है - शुक्लजी किस बात पर की ओर सचेत करते हैं

VI प्रश्नों का उत्तर पाँच-पाँच वाक्यों में दीजिएः-

1. सच्चे मित्र का लक्षण बताइए।

2. अच्छे मित्र का क्या-क्या कर्तव्य है?

3. किन-किन लोगों से मित्रता नहीं रखनी चाहिए?